पाठ्य-सामग्री ①

षष्ठ पत्र (हिन्दी प्रतिष्ठा)

काव्यशास्त्र (अलंकार)

— चन्द्रेश्वर प्रसाद सिंह
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
अल-हफ़ीज़ कॉलेज, आरा

— शेषांश, भाग-3

⑥ रूपक

उपमेय में उपमान का निषेधरहित आरोप रूपक है।

रूपक में उपमा की अपेक्षा सादृश्य की अधिकता होती है। फलस्वरूप दो भिन्न वस्तुएँ— उपमेय और उपमान — एक-दूसरे से अभिन्न हो जाती हैं। दोनों में एक तादात्म्य की स्थापना होती है। अब 'मुख चन्द्रमा के समान' नहीं रहता, 'मुखचन्द्र' सुशोभित होता है। वस्तुतः भेद में अभेद की स्थापना रूपक है। जैसे— "अम्बर पनघट में डुबो रही ताराघट ऊषा नागरी।" इस उदाहरण में में अम्बर पर पनघट, तारा पर घट और ऊषा पर नागरी का आरोप किया गया है और ये सभी परस्पर उपमेय-उपमान हैं। अतः इसमें रूपक अलंकार है।

रूपक के मुख्यतः तीन भेद हैं— निरंग रूपक, सांगरूपक और परम्परित रूपक।

(क) निरंग रूपक — जहाँ अंगों के बिना उपमेय में उपमान का आरोप हो वहाँ निरंग रूपक होता है। जैसे— "चरण-कमल बन्दौं हरिराई।" यहाँ चरण (उपमेय) में कमल का आरोप बिना अंगों के किया गया है। इसके दो उपभेद भी हैं। शुद्ध अथवा केवल और मालारूप।

- जहाँ एक उपमेय में एक उपमान का आरोप किया गया हो वहाँ शुद्ध निरंग रूपक होता है। जैसे— "श्री गुरु पद नख मनिगन जोती। सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती॥" यहाँ गुरु चरणों (उपमेय) में एक उपमान 'मणिगन' का आरोप किया गया है, अतः यहाँ शुद्ध निरंग रूपक अलंकार है।

- जहाँ एक उपमेय में अनेक उपमानों का आरोप हो, वहाँ मालारूप निरंग रूपक होता है। जैसे — "हेम की छहर, गंग रावरी लहर
कलिकाल को कहर जमजाल को जहर है।"

उपर्युक्त उदाहरण में गंगा की लहर (एक उपमेय) में हेम, कहर और जहर (तीन उपमानों का आरोप होने के कारण मालारूप निरंग रूपक अलंकार है।

(ख) सांग रूपक — जहाँ अंगों सहित उपमान का उपमेय में आरोप हो।

जैसे— "उदित उदयगिरि मंच पर रघुबर बालपतंग।
बिकसे संत सरोज सब हरषे लोचन भृंग॥"

उपर्युक्त उदाहरण में आरोप निम्नवत हैं—

उपमेय	उपमान
रघुबर	बाल सूर्य
मंच	उदयगिरि
संत	सरोज
लोचन	भृंग

उदित होना, विकसित होना, हर्षित होना आदि इसके अंग हैं। इस प्रकार, अंगों सहित उपमान का उपमेय में आरोप होने के कारण यहाँ सांगरूपक अलंकार है।

(ग) परंपरित रूपक — जहाँ एक आरोप दूसरे आरोप का कारण हो वहाँ परंपरित रूपक अलंकार होता है। तात्पर्य यह है कि आरोपों में परस्पर-निर्भरता होती है। यदि पहले आरोप को हटा दिया जाय तो दूसरा निरर्थक हो जाता है। आरोपों में सम्बन्ध और सादृश्य कल्पना की सहायता से खोजना पड़ता है। आरोप सिद्ध होते ही सम्बन्ध स्वाभाविक और चमत्कारपूर्ण हो जाता है।

जैसे — 'खल-वन के लिए हो शिवा तुम दावाग्नि समान।" यहाँ खलों के झुंड पर वन का तथा शिवाजी पर जंगल की आग का आरोप किया गया है। प्रथमदृष्टया इनमें कोई साम्य-सादृश्य नहीं दिखायी पड़ता। पुन: दोनों अलग-अलग होने पर अपना चमत्कार खो देते हैं। किंतु कल्पना से यह दृश्य उभरता है कि खलों के समूह रूपी वन को शिवाजी जैसी स्वत: उत्पन्न होने वाली दावाग्नि पल-भर में जला कर खाक कर देती है। इस प्रकार दोनों आरोपों में साम्य स्थापित हो जाता है।

(7) ~~(6)~~ उत्प्रेक्षा

उपमेय में उपमान की संभावना उत्प्रेक्षा है।

उत्प्रेक्षा का अर्थ है उत्कट रूप से देखना। इसमें ज्ञान की कोटि निश्चित नहीं होती, किन्तु झुकाव निश्चय की ही ओर रहता है, इसलिए इसे पूर्णत: सन्देहात्मक नहीं कहा जा सकता। उत्प्रेक्षा में मानो, जानो, मनु, जनु आदि उत्प्रेक्षावाची शब्दों का प्रयोग होता है। जैसे 'मुख मानो चंद्रमा है।' इस वाक्य में 'मानो' द्वारा मुख में चन्द्रमा की संभावना बतायी गई है। अत: यहाँ उत्प्रेक्षालंकार है।

उत्प्रेक्षा के तीन भेद हैं — वस्तूत्प्रेक्षा, हेतूत्प्रेक्षा, फलोत्प्रेक्षा।

(क) एक वस्तु में दूसरी वस्तु की संभावना वस्तूत्प्रेक्षा है।

जैसे — "लताभवन ते प्रकट भे, तेहि अवसर दोउ भाय।
निकसे जनु जुग बिमल बिधु, जलद पटल बिलगाय॥"

उपर्युक्त उदाहरण में राम-लक्ष्मण में दो चन्द्रों की संभावना के कारण वस्तूत्प्रेक्षा है।

→

(ख) जो हेतु नहीं है, उसे हेतु मानकर उत्प्रेक्षा करना हेतूत्प्रेक्षा है।
हेतु का अर्थ है कारण। हेतूत्प्रेक्षा में कारण न रहने पर भी कारण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। जैसे — 'चन्द्रमा मानो रात्रि के वियोग से पीला पड़ गया है।' इस उदाहरण में पीलेपन का कारण नहीं है किन्तु उसे रात्रि के वियोग में पीला पड़ना कहा गया है। अतः यहाँ हेतूत्प्रेक्षा है। इसी तरह "मनो कठिन आँगन चली ताते राते पायँ" नायिका के पाँव स्वतः लाल हैं, किन्तु उन्हें कठोर आँगन में चलने के कारण लाल बताया गया है।

(ग) फलोत्प्रेक्षा — जो फल नहीं है उसमें फल की संभावना फलोत्प्रेक्षा है।

जैसे — "मानहु बिधि तनु अच्छ छबि, स्वच्छ राखिबे काज।
दृग-पग पोंछन को कियो, भूषण पायंदाज॥"

उपर्युक्त दोहे में कहा गया है कि नायिका की छवि को स्वच्छ बनाये रखने के लिए, किसी की नजरों की मैल नहीं जमने देने के लिए ब्रह्मा ने भूषण रूपी पायंदाज (पैर पोंछने वाला कपड़ा) की व्यवस्था की है। अर्थात् जैसे पैर की मैल पोंछने के लिए पायंदाज, वैसे ही आँख की मैल धोने के लिए आभूषण। दरवाजे पर पायंदाज और चेहरे पर दृष्टि पड़ने के पहले आभूषण। इस प्रकार अफल में फल की उत्प्रेक्षा के कारण हेतूत्प्रेक्षा है।

(8) सन्देह — उपमेय में उपमान का सन्देह (संशय) सन्देह अलंकार है।
इसके तीन भेद और लक्षण-उदाहरण निम्नलिखित हैं —

(क) शुद्ध सन्देह — जहाँ अन्त तक सन्देह बना रहे वहाँ शुद्ध सन्देह अलंकार होता है।

जैसे — "चन्द्रकला कै चंचला, कै चंपे की माल।
कै चामीकर की छरी, सुछबि भरी कै बाल॥"

यहाँ नायिका में चन्द्रकला, बिजली, चम्पे की माला और सोने की छड़ी का संदेह व्यक्त किया गया है। अतः शुद्ध सन्देह अलंकार है।

(ख) निश्चयमध्य सन्देह — इसमें आदि और अंत में सन्देह किंतु मध्य में निश्चय रहता है।

जैसे — "कहूँ मानवी यदि मैं तुमको तो वैसा संकोच कहाँ?
कहूँ दानवी तो उसमें है यह लावण्य कि लोच कहाँ?
वनदेवी समझूँ तो वह तो होती है भोलीभाली।
तुम्हीं बताओ अतः कौन तुम हे रंजित रहस्यवाली!"

उपर्युक्त उदाहरण में लक्ष्मण को पहले सन्देह होता है कि यह शूर्पणखा मानवी है या दानवी? अथवा यह शूर्पणखा वनदेवी तो नहीं है? लेकिन तीनों के अलग-अलग पाये जाने वाले लक्षण तो इसमें नहीं हैं। फिर यह निश्चय भी होता है कि यह उनमें से कोई नहीं है।

(ग) निश्चयान्त सन्देह — जहाँ आरंभ में सन्देह हो पर अन्त में निश्चय हो जाय।

→

जैसे — "घन-च्युत चपला कै लता, संसय भयो निहारि।
दीरघ स्वासनि लखि कपी, किय सीता निरधारि।।"

अशोकवाटिका में सीता को देखकर पहले हनुमान को संदेह होता है पर यह निश्चय भी होता है कि यह मेघ से गिरी बिजली नहीं है और न ही यह लता है। यह दीर्घ उच्छ्वास वाली सजीव वस्तु (सीता) है। यह संशय के उपरान्त हुआ निश्चय है। अतः यहाँ निश्चयांत संदेह है।

(9) अतिशयोक्ति :

उपमेय को छिपाकर उपमान के साथ उसकी अभेदप्रतीति कराना अतिशयोक्ति अलंकार है।

अतिशयोक्ति का अर्थ है — बढ़ा-चढ़ाकर किया गया कथन। जब कोई उक्ति इतनी बढ़ा-चढ़ाकर की जाय जिससे लोक-मर्यादा या सीमा का उल्लंघन होता हो अथवा जिसपर सहज विश्वास न होता हो तो वहाँ अतिशयोक्ति अलंकार होता है। जैसे — किसी सुन्दरी को देखकर कहा जाय — यह चाँद कहाँ से निकल आया। यहाँ दो बातें स्पष्ट हैं। पहली यह कि (सुन्दर मुख) का उल्लेख न कर उसे सीधे चाँद कह दिया गया। दूसरी बात यह है कि मुख कितना भी सुन्दर, प्रकाशमान और आह्लादक हो, वह चाँद की बराबरी नहीं कर सकता। मुख को चाँद बताने पर लोक सीमा का उल्लंघन होता है। अतः यहाँ अतिशयोक्ति अलंकार है। इसके भेद और लक्षण-उदाहरण निम्न हैं —

(क) रूपकातिशयोक्ति — जहाँ उपमेय को छिपा कर उपमान के द्वारा उसका बोध कराया जाय।

जैसे — "अद्भुत एक अनूपम बाग।
जुगल कमल पर गजवर क्रीड़त, तापर सिंह करत अनुराग।।"

यहाँ चरण के बदले युगल कमल, जाँघ के बदले गजवर और कटि के बदले सिंह का कथन है। उपमेय को छिपाकर सिर्फ उपमानों का उल्लेख है। अतः यहाँ रूपकातिशयोक्ति है।

(ख) भेदकातिशयोक्ति — जहाँ अभेद रहने पर भी भेद का वर्णन हो।

जैसे — "नयी अरुणिमा जगी अनल में, नवलोज्ज्वलता जल में,
नभ में नव्य नीलिमा, नूतन हरियाली भूतल में।"

यहाँ नयी लालिमा, नवीन उज्ज्वलता, अपूर्व नीलिमा, नूतन हरियाली जैसे विशेषणों का प्रयोग भेदसूचक है। वास्तव में इनमें कोई नयापन नहीं होता। प्रकृति की ये चीजें प्रतिदिन की ही भाँति दिखायी पड़ती हैं। परन्तु कृष्ण के आगमन से इनमें नयापन देखना अभेद में भेद की प्रतीति कराना है। अतः यहाँ भेदकातिशयोक्ति है।

(ग) असम्बन्धातिशयोक्ति — जहाँ सम्बन्ध रहने पर भी सम्बन्ध का अभाव कहा जाय। →

जैसे — "भुग उरोज तेरे अली, नित नित अधिक बढ़ायँ।
अब इन भुज लतिकान में, रही ये न समायँ॥"

यहाँ उरोजों के ~~भुजलता~~ भुज-मध्य में न अँटने की बात कही गयी है, जबकि उरोज बड़े हों या छोटे, वे रहते भुज-मध्य में ही हैं। इस तरह उरोजों के न अँटने की बात सम्बन्ध में असम्बन्ध दिखाती है। अतः यहाँ असम्बन्धातिशयोक्ति अलंकार है।

(घ) सम्बन्धातिशयोक्ति — जहाँ सम्बन्ध न रहने पर भी सम्बन्ध बताया जाय।

जैसे — "यदी तरल यमुना तरंगिणी
घनी खड़ी हो जावे,
तो उस अंग भंगिमा का कुछ
रंग-ढंग वह पावे।"

यहाँ कृष्ण का आंशिक सादृश्य पाने के लिए यमुना घनरूप में खड़ी हो गयी बतायी गयी है। इस कल्पना में लोकमर्यादा का उल्लंघन होने के कारण सम्बन्धातिशयोक्ति अलंकार है।

(ङ) अक्रमातिशयोक्ति — जहाँ कारण और कार्य का एक साथ होना कहा जाय।

जैसे — "वह शर इधर गाण्डीव-गुण से, भिन्न जैसे ही हुआ।
धड़ से जयद्रथ का उधर, सिर छिन्न वैसे ही हुआ॥"

यह सामान्य तथ्य है कि बाण (कारण) पहले छूटता है और सिर (कार्य) बाद में कटता है। परंतु इस उदाहरण में अर्जुन के गाण्डीव से बाण का छूटना और जयद्रथ का सिर धड़ से अलग होना साथ-साथ वर्णित है। अतः यहाँ अक्रमातिशयोक्ति है।

अत्यंतातिशयोक्ति — जहाँ कारण के पहले कार्य का होना कहा जाय।

जैसे — "पड़ी अचानक नदी अपार
घोड़ा कैसे उतरे पार?
राणा ने सोचा इस पार
तब तक चेतक था उस पार।"

अपार नदी के अचानक सामने आने पर राणा ने जैसे ही सोचा कि कैसे इसके पार उतरें, तब तक चेतक उस पार पहुँच गया। स्पष्ट है कि कारण के पहले ही कार्य सम्पन्न हो गया। अतः यहाँ अत्यंतातिशयोक्ति अलंकार है।

(हस्ताक्षर)
30/09/21